International Journal of Humanities and Social Science Research
ISSN: 2455-2070; Impact Factor: RJIF 5.22
www.socialresearchjournals.com
Volume 3; Issue 2; February 2017; Page No. 29-31

राधावल्लभ त्रिपाठी रचित लघुकथा "अभिनन्दनम्" की समीक्षा

डॉ0 ज्वाला प्रसाद
सहायक कुलसचिव, संस्कृत विभाग दिल्ली विश्वविद्यालय दिल्ली, भारत।

प्रस्तावना

'स्मितरेखा' लघुकथा संग्रह की द्वितीय कथा- **अभिनन्दनम्** है। यह कथा आज के शैक्षणिकजगत् में व्याप्त घृणित आत्माभिनन्दन-लिप्सा पर करारा व्यङ्ग्य है। कथा काल्पनिक तो है किन्तु कहीं नहीं लगता है कि यह वास्तविकता से दूर है। यह कथा अपने में हास्य को संजोए है और स्वार्थ से बंधे गुरु-शिष्य के रिश्ते को दिखाती है। वस्तुतः आज के युग में अधिकतर अभिनन्दन ग्रन्थ या तो अभिनन्द्य के प्रयास से या फिर उनके या उनके परिवार के व्यय से प्रकाशित हो रहे हैं। ऐसे में वस्तुतः जो अभिनन्द्य हैं वे कहीं किसी कोने में चुप-चाप बैठे हुए हैं। वे यह सोचते होंगे कि क्या लाभ ऐसे अभिनन्दनों का? अभिनन्दन की इस भीड़ में और प्रतिष्ठा पाने की आपाधापी में कौन समझेगा कि कौन अभिनन्द्य है? यहाँ शैक्षणिक सभ्य समाज के खोखलेपन का युगबोध है तो वहीं इस कथा का दूसरा पहलू है- दूषित गुरु-शिष्य सम्बन्ध। शिष्यहित में कुछ किए बिना गुरु की अपेक्षाएं दिनों-दिन बढ़ रही है। इसमें आचार्य त्रिपाठी ने यह भी प्रदर्शित किया है कि स्वार्थी छात्र भी अपना काम निकालने के बाद गुरु को वास्तविक सम्मानीय दृष्टि से नहीं देखता है।

कथानक

एक रामदयालु नामक आचार्य जो आसन्न सेवानिवृत्त हैं और षष्टिपूर्ति पर स्वयं का अभिनन्दन कराना चाहते हैं। उन्हें पता है कि कोई स्वयं तो अभिनन्दन नहीं करेगा इस कारण स्वयं ही इसका बीड़ा उठाते हैं। वे तीन शिष्यों को पत्र लिखकर झूठ ही एक अभिनन्दन समिति निर्माण का आश्वासन देते हैं। जिनमें से एक गुरु के द्वारा अपकृत है तो वह व्यङ्ग्य करता हुआ असमर्थता दिखाता है। दूसरा उपकृत है पर अपने प्राचार्य का निकटस्थ बनने हेतु उपेक्षा करता है और तीसरा कुछ प्रयोजन सिद्ध हो इस कारण कुछ रुचि दिखाता है तो गुरु अनेक प्रलोभनों से उसे तैयार करते हैं। गुरु अपने शिष्यों के नाम से प्रशस्ति पत्र, प्रशस्ति काव्य रचकर शिष्य केशव प्रसाद को छपवाने के लिए देते हैं। वह भी मुद्रण के लिए गुरु के समक्ष पचास हजार रुपये की मांग रखता है। गुरु किसी कारण से दिल्ली आते हैं और मार्ग में शिष्य के पास जाकर उसे मुद्रण के लिए अग्रिम राशि के लिए 20,000 और अभिनन्दन समारोह के दिन गुरु को देने के लिए 21,000 रुपये देते हैं।

पुनः शिष्य गुरु से और रुपये की मांग करता है पर गुरु उतने रुपये नहीं देते जितने मुद्रण के लिए चाहिए। वे शिष्य को विदेश में अतिथि आचार्य के रूप में भिजवाने का प्रलोभन देते हैं। आखिरकार वो दिन भी आ ही जाता है जिसकी गुरुजी को बहुत समय से प्रतीक्षा थी। गुरुजी के साथ उनकी पत्नी भी आगरा जाती है, जहाँ यह अभिनन्दन समारोह होना है। वह अपने दोनों बेटों को भी वहीं बुला लेती है। गुरु समारोह स्थल पर पहुँचते हैं तो देखते हैं कि समारोह स्थल बहुत भव्य रूप से सजाया हुआ है। अब गुरु को इन्तजार है तो अभिनन्दनग्रन्थ का जो कि कही के कुलपति आदि प्रतिष्ठित पद को प्राप्त करने के लिए एक सोपान है। गुरु को संदेह है कहीं वह केशव प्रसाद ने छपवाया भी है या नहीं। गुरु को मंच पर लाया जाता है साथ ही पुस्तक विमोचन के लिए आए मन्त्री पूरनमल भी होते हैं। मञ्च पर रामदयालु का भव्य अभिनन्दन होता है। किन्तु गुरु का मन तो अभिनन्दन ग्रन्थ देखने को लालायित है। मन्त्री के भाषण के बाद एक स्वयंसेवक के हाथ में सुनहरे रंग की पेटिका देखकर गुरु सोचते हैं कि शायद इसमें ही ग्रन्थ हो।

केशव प्रसाद घोषणा करता है कि "इस अवसर पर गुरुजी की शिष्य मण्डली ने 21,000 रुपये एकत्रित करके दिए हैं जिनमें 20,000 रुपये मिलाकर गुरुजी एक अनुसंधान केन्द्र की स्थापना करेंगे।" गुरुजी ये सुनकर मन ही मन कुढ़ते हैं पर ऊपर से स्वीकृति देते हैं। तत्पश्चात् गुरुजी का चिर-प्रतीक्षित क्षण आ जाता है। अभिनन्दन ग्रन्थ के लोकार्पण का। रेशमी कपड़े में लिपटा हुआ ग्रन्थ लाया जाता है जिस मन्त्री के हाथों विमोचन कराया जाता है। गुरुजी आवरण पृष्ठ पर अपना भव्य छाया चित्र देखकर मानों आसमान में उड़ने लगते हैं। वे उसे खोलकर देखना ही चाहते हैं कि सावधान केशव प्रसाद गुरु और मन्त्री के हाथ से ग्रन्थ लेकर पहले से तैयार खड़े अपने शिष्य को देकर गुरुजी को माइक पर बुला लेता है। गुरु भाषण देते हैं, वहाँ केशव प्रसाद के आग्रह से व मंत्री के पिछलग्गु कुछ व्यक्ति आए हैं जिन्हें इस समारोह से कोई मतलब नहीं है वे बातें करने में लगे हैं। कुछ लोग ऊँघ रहे है, जब गुरुजी कोई बात कहते हैं तो केशव प्रसाद के इशारे पर कुछ शिष्य ताली बजाते हैं तो आवाज सुनकर सभी ताली बजाने लगते हैं। इस प्रकार समारोह पूर्ण होता है। गुरु की नज़रें अब भी उस व्यक्ति को ढूँढ रही हैं जो पुस्तक लेकर चम्पत हुआ है। गुरुजी केशव प्रसाद पर क्रोध भी प्रकट करते हैं। केशव प्रसाद गुरुजी को भोजन कराता है तथा जब कार में बैठा रहा होता है तभी पुस्तक वाला शिष्य आता है ग्रन्थ गुरुजी को देकर केशव प्रसाद रेल छूटने की दुहाई देकर ग्रन्थ को सूटकेस में रखवाता है। गुरु को रेल में बैठा देता है। गुरुजी पत्नी के सो जाने के बाद चुपके से ग्रन्थ को खोलकर

देखते हैं तो सभी पृष्ठों को रिक्त देखकर आसमान से पाताल में आ पड़ते हैं। फिर वे रुपयों वाली पोटली खोलते हैं तो वह भी खाली, गुरु अन्दर ही अन्दर गुस्से से रो पड़ते हैं पोटली में एक पत्र मिलता है जिसमें केशव प्रसाद ने सम्पूर्ण आय व्यय के विवरण के साथ शेष राशि 1 रुपये को पोटली में रखा है। अब गुरु ट्रेन में लेटे हुए सोच रहे हैं कि केशव प्रसाद ने उन्हें ठगा है या स्वयं उन्होंने?

भाषा-शैली

आचार्य त्रिपाठी की शैली रीति की दृष्टि से वैदर्भी को ही आश्रित करती है, कहीं-कहीं समस्त पद आ गया है। एक स्थान पर गौडी युक्त पद दृष्टिपथ पर आता है रामदयालु के खर्राटों का वर्णन करते हुए कवि लिखता है- 'रामदयालुर्भोजनं कृत्वा घूत्कारघोरनासा-रवपूरितभुवनाभोगो स्वपिति स्म।' [1]

आचार्य त्रिपाठी कहीं-कहीं शास्त्रीय पारिभाषिक शब्दों के समान शब्दों का उत्तम प्रयोग करते हैं- जैसे- 'एतादृशानि पत्राणि न पत्राणि पत्राभासभूतानि तानि' [2] यहाँ रसाभास, भावभास की तरह पत्राभास शब्द अतिरोचक है।

आचार्य त्रिपाठी उत्तम काव्यों की सदूक्तियों का अतिशोभाकारी प्रयोग करते हैं जैसे- 'उद्धरेदात्मनाऽऽमानं नात्मानमवसादयेदिति गीतोक्तवचः स्मरन् रामदयालुः स्वयमेव स्वाभिनन्दनं कारयितुं कृतसङ्कल्पोऽभवत्।'[3] यहाँ गीतावाक्य का प्रयोग है। तथा- 'परस्परं भावयन्तः श्रेयं परमवाप्स्यथ इति उक्तं गीतायाम्।' [4]

लेखक की भाषा मुहावरेदार है। वह मुहावरों का प्रयोग अति उत्तम ढंग से करता है। जैसे- रामदयालु के साथ जब उसकी पत्नी भी चलने को बोलती है तो रामदयालु सोचते हैं- 'अयमपरो गण्डस्योपरि विस्फोटः।'[5] वे लौकिक न्याय का प्रयोग करते हैं- 'समागतानि पत्राणि पत्रवाहकहस्तादादाय तेषु शूर्पतुषन्यायेन निरर्थकानि पत्राणि अपाकृत्य केशवप्रसादस्य पत्रमसौ गवेषयामास।' [6] यहाँ शूर्पतुषन्याय का प्रयोग। और भी जैसे- 'सम्प्रति रामदयालुं प्रति वर्तते तस्य प्राचार्यस्याहिनकुलम्।' [7]

रस

इस कथा में हास्य रस का परिपाक देखने को मिलता है। लेखक शिक्षा क्षेत्र से जुड़ा है, अतः उसने इस आत्माभिनन्दन की भावना को अतिनिकटता से देखा है। अतः वह कथा के संदेश को सहृदय तक पहुँचाने में सफल रहा है। यह कथा आत्माभिनन्दनाभिलिप्सा पर करारा व्यङ्ग्य है। कुछ पङ्क्तियाँ ऐसी हैं जिन्हें पढ़ते ही हँसी आती है जैसे- 'अभ्रङ्कषमुच्छलति स्म रामदयालोर्हृदयम्।' [8]

अलङ्कार

अलङ्कार कवि वाणी में स्वयं अनुस्यूत हो जाते हैं। इस कथा में अनेक अलङ्कारों का प्रयोग देखने को मिलता है। जैसे-

उपमा

केशव प्रसाद का पत्र पाकर हरिचन्दन और चन्द्र से स्पृष्ट शिशिर की तरह उनका हृदय हो गया। [9] जब बिना पढ़े ही रामदयालु से अभिनन्दन ग्रन्थ की प्रति वापस ले ली जाती है तो रामदयालु हाथ से छूटे पानी के पात्र वाले पिपासाकुलित व्यक्ति की तरह रह जाते हैं। [10] लेखक एक ही उपमेय के लिए अनेक उपमाओं का प्रयोग करता है जैसे- रामदयालु केशव प्रसाद को अनेक प्रलोभनों से वश में करना चाहता है। इस प्रसंग में- 'इत्यादिर्वचोभिः केशवप्रसादं फणधरमिव मान्त्रिकः सुषिरवीणया, व्याध इव शकुन्तं जालेन, गोपीव हरिणं गीतमाधुर्येण वशीकर्तुमचेष्टत।' [11]

उत्प्रेक्षा

जैसे केशव प्रसाद के पत्र को पढ़कर रामदयालु की स्थिति- 'पठित्वा पत्रं चिरनिद्राया उत्थित इव महासागरसमुत्थिततरङ्गवज्रे तरन्निव नभसि डयमान इव रामदयालुश्चिरमासः।' [12] लेखक कहीं-कहीं बाणभट्ट का मार्ग अपना कर एक वस्तु के लिए कई अलङ्कारों का प्रयोग करता है पर पुरातन लेखकों की तरह ये अलङ्कार पाठक को उद्वेलित नहीं करते। अन्य भी जैसे अनुप्रास- 'ऊह-प्रत्यूह-निर्यूह-कुहर-संविष्टो मासमेकं क्षपयामास।' [13] 'घूत्कारघोरनासारव- पूरितभुवना भोगो' [14] यहाँ घ, र, भ की आवृत्ति वृत्त्यनुप्रास बनाती है।

काल

लेखक किसी भी स्थिति का वर्णन करने में पूर्ण रूप से सफल रहा है, जैसे समारोह में दर्शक वृन्द की स्थिति का वर्णन करते हुए लिखता है- कुछ प्रबुद्ध प्राध्यापक रामदयालु की अतिरञ्जित स्तुति से उबकर सो रहे थे। कोई भी केशव प्रसाद के विराम चिह्न को नहीं समझ रहा था। जब कोई श्रोता ताली बजाता था तो भेड़ चाल से सब ताली बजा देते थे। [15] इस प्रकार लेखक सभी दृष्टि से कथा का प्रपञ्च रचने में पूर्णतः सफल रहा है।

सन्दर्भ ग्रथ

1. स्मितरेखा, पृ. 13
2. स्मितरेखा, पृ. 06
3. स्मितरेखा, पृ. 09
4. स्मितरेखा, पृ. 16
5. स्मितरेखा, पृ. 28
6. स्मितरेखा, पृ. 13
7. स्मितरेखा, पृ. 10
8. स्मितरेखा, पृ. 21
9. अवाप्य च तत् हरिचन्दनेन्दुसंस्पर्शशिशिरमिव सञ्जातं हृदयं तदीयम्। - स्मितरेखा, पृ. 13
10. पिपासुरिव सतृष्णोऽपहस्ततपानीयपात्र इव तस्थौ रामदयालुः। - स्मितरेखा, पृ. 22

11. स्मितरेखा, पृ. 15
12. स्मितरेखा, पृ. 14
13. स्मितरेखा, पृ. 10
14. स्मितरेखा, पृ. 13
15. केशवप्रसादः श्रोतृमण्डल्यै ..... तालिकाः अवादयन्। – स्मितरेखा, पृ. 20